chapter-2

दिव ती य परिच्छेद :

" गुजरात के प्रमुख सन्त-सम्प्रदाय "

द्वितीय परिच्छेद

"गुजरात के प्रमुख सन्त-सम्प्रदाय"

गुजरात की ज्ञानाश्रयी शाखा की पृष्ठभूमि का अध्ययन कर चुकने के पश्चात् अब हम गुजरात की प्रमुख सन्त-प्रणालिकाओं, पंथों एवं सम्प्रदायों का अध्ययन करेंगे :

:१: शैव-शाक्त साधना एवं गोरख पंथ :

मध्यकालीन धर्म-साधना में गोरख-पंथ एवं शैव-साधना का महत्त्वपूर्ण स्थान है । वस्तुत: यह सम्प्रदाय मध्यकाल की सामान्य जनता में प्रचलित सभी साधना और धर्म-पद्धतियों का एक अभिनव समन्वित स्वरूप है ।[१] नाथ-सम्प्रदाय की प्राण प्रतिष्ठा का श्रेय मत्स्येन्द्रनाथ तथा गोरखनाथ को दिया जाता है । इस पंथ के मूल प्रवर्तक आदिनाथ अथवा भगवान शिव माने जाते हैं । इस मत के अनुयायी योगी, कनफटा, दर्शनी आदि के नाम से पुकारे जाते हैं ।[२] इसकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेकों मत हैं । कुछ विद्वान इसे वज्रयान तथा सहजयान का ही विकसित एवं परिष्कृत रूप मानते हैं । कुछ लोग इसका मूल उद्गम तांत्रिक बौद्ध धर्म में खोजते हैं और कुछ विद्वान इसे शैव-साधना पद्धति ही मानते हैं जिस पर बाद में बौद्ध-तन्त्रों का प्रभाव पड़ा ।[३] डॉ. त्रिगुणायत ने इसे स्वतन्त्र रूप से विकसित मानकर इस पर हिन्दू शैव शाक्त तंत्रों, बौद्ध-तंत्रों, शैव-दर्शन और योग-साधना आदि का प्रभाव माना है ।[४] डॉ. मोतीसिंह के अनुसार नाथ सम्प्रदाय में मुख्यत: कौल सम्प्रदाय, कापालिक और हठवादी योग सम्प्रदाय का समावेश है ।[५] मध्ययुग में प्रचलित लवकुलीश, कापालिक, नाथ, गोरक्षनाथी, रसेश्वर आदि पाशुपत शैवों तथा तमिल, काश्मीर, वीर आदि आगम शैवों का का प्रचार देखा जाता है ।[६] इनमें लवकुलीश मत गुजरात में शुरू हुआ । भंडारकर

---

१. हि.नि.का.दा. - डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत - पृ. २६६ ।
२. Gorakhnath and the Kanphatā Yogis - Brigs Page 1.
३. नाथ सम्प्रदाय - श्री. हजारीप्रसाद - पृ. ४-५ ।
४. हि.नि.का.दा. - डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत - पृ. २६६ ।
५. निर्गुण साहित्य: सांस्कृतिक पृष्ठभूमि - पृ. ५२ ।
६. एन आउटलाइन ऑफ दि रिलीजस लिटरेचर ऑफ इण्डिया, फर्कुहर, पृ.१६०-६१।

के अनुसार पाशुपत का ही यह दूसरा नाम है, जो बाद में मैसूर से राजपूताना तक फैल गया । शिव के जो अवतार लिंग, कूर्म तथा वायुपुराण में `लकुलि` कहे गये हैं, वही इनके आधार हैं । गुजरात में कारपट्टन में एक लकुलीश मूर्ति भी पायी गयी है । माध्वाचार्य ने इसका उल्लेख भी किया है । इनकी सभी चीजें पाशुपतों जैसी ही हैं । केवल भस्म के बदले वे सिकता में स्नान करते हैं, यही भेद है ।[१] सोलंकी-काल में लकुलीश धर्म राज्य द्वारा प्रतिष्ठित था तथा लकुलीश पाशुपताचार्य को शिव का अवतार माना जाता था जिनका जन्म लाट देश में नर्मदा तट पर कारावण-कायावरोहण में हुआ था । नर्मदा शैवों के लिए गंगा के समान पवित्र है ।[२]

बारहवीं शती में कापालिक पंथ गुजरात में प्रवर्तित था । हेमचन्द्राचार्य के सिद्धहेम में इस प्रकार का एक उल्लेख मिलता है —

`प्रिय एम्बहिं करें सेल्लु करे छड्डहि तुहुँ करवालु
जं कावालिय बप्पुडा लेहिं अमग्गु कवालु ।`[३]

अर्थात् `हे प्रिय ! तलवार त्याग कर अब हाथ में भाला धारण करो, जिससे बेचारा कपाली अमग्न कपाल पा सके ।` यहाँ पर `बप्पुड़ा` शब्द ध्यान देने योग्य है । कापालिक को `बप्पुड़ा` कहा गया है । संभव है सिद्धराज के समय जैन धर्म को राज्याश्रय मिलने पर कापालिकों का जोर घट गया हो ।[४] फिरभी चौदहवीं शती तक गुजरात में शैवमत की प्रमुखता थी । सिन्द्रा प्रशस्ति में गुजरात के अनेक पाशुपत आचार्यों का उल्लेख

---

१. `हिन्दी और मराठी का निर्गुण सन्त-काव्य` डॉ.प्रभाकर माचवे पृ.५१ ।
२. `गुजरात नो सांस्कृतिक इतिहास` पृ.२५२ ।
३. आ.हेमचन्द्राचार्य विरचित सिद्धहेम ३८७ : ३
४. वल्लभि-काल में शैव-साधकों का अत्यधिक मान था । वल्लभिनरेश तथा नेपाल-नरेश दोनों ही शैव-धर्माध्यक्ष को `परम दैवत बप्प` के नाम से अभिहित करते थे इस प्रकार के उल्लेख गिरनार के चतुर्थ शिलालेख तथा नेपाल-नरेश वसन्तसेन के ताम्र-लेख में मिलते हैं ।
: देखिए — `गुजरात नो प्राचीन इतिहास` भाग १, पृ.८८ - ९० :

मिलता है । मेवाड़ के आचार्य कुशिक शाखा के तथा गुजरात के आचार्य गार्ग्य शाखा के थे । ग्यारहवीं से चौदहवीं शती के मध्य गुजरात में तीन प्रमुख शिव-मन्दिर थे-:१: सोमनाथ, :२: भूलेश्वर, :३: रुद्रमहालय । चौदहवीं शती में गुजरात पर मुसलमानों का आक्रमण हुआ और अनेक पाशुपत मठों को तोड़ा गया । महमूद गज़नवी ने जिस प्रकार सोमनाथ के मन्दिर को लूटा था और इस लूट में उसे बीस लाख दीनार के लगभग की प्राप्ति हुई थी,[१] उसी प्रकार अलाउद्दीन द्वारा रुद्रमहालय के लूटे जाने का उल्लेख एक हस्त प्रति में इस प्रकार मिलता है-'अथ श्री रुद्रमाला नु कवीत छे ।। संवत बार बिलोतरों ।। सोलंकी सीद्धराव ।। रुद्रमाल नी थापना ।। माघ मास परमाण ।। कृष्ण पक्ष चतुर्दशी ।। बार चंद्र निरधार ।। शिव पूज्या साचे दले ।।नाम थयुं युग चार ।।१।। थर सत चौद चौवाल ।। थंभ सै सोल निरंतर ।। पूतलि सहस्त्र अढार ।। हीरा माणक जडित्र ।। छपन लाख तो गजतुरी ।। बोहोतर सै बारी बड़ी ।। बोहोतर सै कनक जालियों ।। त्रिस सहस्त्र ध्वज दंड ।। कनक कलश शिर आगली ।। ते रुद्रमाल ने करावतां ।।ब चौद क्रोड मोहोर ।। कविजन ने कागल चडी ।। मोहोर तणुं मापू करयुं ।। सोल रुपये एक ।। रुद्रमाल करते वाधरी ।। ते कविजन ने कागद चडी ।।२।। संवत् तेर पासेट मां दल्ली ने दरबार ।। असुर थयो अलाबदी ।। आवी युद्ध कर्यो अपार ।। रुद्रमाल पाडी पाधर कर्यो ।। नरां उतारयो नाद ।।३।। माठो कर्यो मलेचने देवल दीयो गिराई ।। देव देवीन देवता सरवें रहे छुपाई ।।४।। इति श्री रुद्रमाल नु कवित्त संपूरणम् ।।[२]

यद्यपि यह प्रति बहुत प्राचीन प्रतीत नहीं होती जैसाकि इसके अन्तर्गत कहा गया है-'मोहोर तणुं मापू करयुं, सोल रुपये एक' अर्थात् मुहर की कीमत सोलह रुपये के बराबर आज से साठ सत्तर वर्ष पूर्व समझी जाती थी । इस आधार पर इसे हम साठ वर्ष पहले लिखी गयी प्रति मान सकते हैं जिसमें एक महत्वपूर्ण बात कही गयी है कि दिल्ली अधिपति अलाउद्दीन ने संवत् १३६५ में रुद्रमहालय का विनाश किया था । इसके अनन्तर भी

---

१. देखिए-'शैवधर्म नो इतिहास' श्री.दुर्गाशंकर शास्त्री ।
२. हस्तप्रति पो.नं ३०, अ.न.१४, डा.पु., नडियाद ।

गुजरात में पौराणिक शैवमत बना रहा । पूजाविधि की सरलता ही इसके महत् प्रचार का कारण है ।

शैव-साधना का प्रभाव :

नरसिंह मेहता स्वयं शैवोपासक थे । 'हारमाला' में उन्होंने कहा है कि जो शिव और कृष्ण में भेद मानता है वह अधम और नरक का अधिकारी है । दयाराम के काव्य में कृष्णभक्ति के साथ-साथ शैवमत के प्रति आदरभाव है । भालणकृत 'शिव-भीलड़ी संवाद' नागरकृत 'शिव-विवाह' शामल कृत 'रेवाखंड' और 'शिव-महात्म्य' आदि काव्य-ग्रन्थ शैव भक्ति से प्रभावित होकर ही लिखे गये हैं । गुजरात के शैव-साधक सन्तों में शिवानंद तथा रणछोड़जी दीवान का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है । रणछोड़जी दीवान का 'शिव-रहस्य' व्रजभाषा में लिखा हुआ एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है । इसके अलावा गुजरात के अनेक ज्ञान मार्गी सन्तों पर शैव-साधना का प्रभाव पड़ा है । अखो तथा छोटम आदि सन्तों की बानियों में जगह-जगह 'शिव' शब्द का प्रयोग ब्रह्म के अर्थ में ही मिलता है ।

शाक्त मत :

शिव-पार्वती के युगल आदर्श की पूजा आज भी गुजरात में घर-घर देखी जाती है । यही कारण है कि गुजरात में पौराणिक कोटि का शैवमत ही अधिक प्रचलित हुआ । साम्प्रदायिक शैव-साहित्य प्रायः नगण्य है । दक्षिण की शैव साधना की अपेक्षा गुजरात की शैव-साधना अधिक सरल एवं सहज है उसका कारण यह है कि यहाँ शिव एवं शक्ति के बीच कोई साम्प्रदायिक भेद नहीं माना गया ।

भारत में कुल ५२ प्रधान शक्तिपीठ हैं । कहा जाता है कि जब भगवान शिव अचेतावस्था में अपने कंधों पर सती के शव को लिए जा रहे थे, तब विष्णु ने उसे ५२ खण्डों में काट दिया । कहीं कहीं पर इन पीठों की संख्या १०८ बतायी जाती है । देवीभागवत में गुजरात के कुछ प्रमुख शक्तिपीठों

के नाम इस प्रकार मिलते हैं -:१: इरावती । :२: सोमेश्वर । :३: प्रभास :४: सरस्वती । :५: समुद्रतीर । सरस्वती पुराण के अनुसार सिद्धराज ने सहस्त्रलिंग झील के चारों ओर १००० शिवलिंगों की स्थापना की और १०८ पीठ बनवाये जिनके मध्य में हरसिद्ध-देवी है । सिरोही के समीप पिंडवारा में ई० स० ६२५ का एक शिलालेख है, जिसमें देवी कौमार्या की पूजा का उल्लेख है । गुजरात के प्रसिद्ध कवि नर्मद ने तो अपनी एक कविता में गुजरात की सीमाएँ देवी-मन्दिरों से ही गिनायी हैं -

'उत्तरमां अम्बा मात,
पूरब मां काली मात ।'

वर्तमान समय में गुजरात में तीन प्रमुख शक्ति पीठ हैं :

:१: उत्तर गुजरात में बहुचरा पीठ ।
:२: आरासुर में अम्बिका पीठ ।
:३: चाँपानेर के पास पावागढ़ में कालीपीठ ।

आरासुर की अंबिका का मंदिर बहुत पुराना है । कहा जाता है कि कृष्ण का मुंडन-संस्कार यहीं पर हुआ था । नागर-ब्राह्मण इस देवी के विशेष उपासक हैं । गुजरात में नवदुर्गा के विशेष पर्व को 'नोरता' कहा जाता है । गरबीकार भाणदास और नाथभवान शक्ति के उपासक थे, जिन्होंने देवी की उपासना में गरबियाँ लिखी हैं और जो गुजराती साहित्य की अमूल्य निधि मानी जाती हैं । वस्तुतः गुजरात में शैव और शाक्त दो भिन्न मत नहीं क्योंकि -

:१: दोनों का दार्शनिक पक्ष एक सा है ।
:२: दोनों अद्वैतमत को मानते हैं ।
:३: तान्त्रिक तथा यौगिक क्रियाएँ एकसी हैं ।
:४: दोनों ३६ तत्त्वों को स्वीकार करते हैं ।
:५: यहाँ पर शिव-शक्ति की पूजा एकसाथ होती है ।

नाथ पंथ :

नाथ पंथ का प्रभाव कच्छ और गिरिनार की ओर विशेष रहा है । कच्छ की उत्तरी सीमा पर अवस्थित धीणोधर-पर्वत प्राचीन काल से अनेक सिद्धों,

साधकों तथा योगी-महात्माओं का साधना-धाम रहा है । जिस प्रकार कच्छ का 'काला-पर्वत' दत्तात्रेय के चरण-चिन्हों को लेकर प्रसिद्ध है ठीक उसी प्रकार धीणोधर पर्वत दादा धोरमनाथ की दीर्घ तपश्चर्या के कारण प्रसिद्ध है । दादा धोरमनाथ : धुरंधरनाथ : मत्स्येन्द्रनाथ के प्रसिद्ध शिष्यों में से एक थे जो उत्तर प्रदेश से सौराष्ट्र होते हुए कच्छ पधारे तथा सर्व प्रथम उन्होंने मांडवी बन्दरगाह के पास रियाण पट्टण में धूनी रमायी । कच्छ में इनका आगमन आठवीं शती के आसपास माना जाता है ।[१] कहा जाता है कि वल्लभीपुर के राजा शिलादित्य को इन्होंने शाप देकर वल्लभीपुर का विनाश किया था तथा किसी पाप का प्रायश्चित करने के लिए धीणोधर पर्वत पर इन्होंने भयंकर तप किया था । मांडवी में पुनडीगाँव के-पर्वत पर सिद्ध धोरमनाथ के चरण चिन्ह हैं जहाँ प्रति वर्ष आषाढ़ सुदी २ को मेला भरता है । कच्छ में इन गोरखनाथी साधुओं को 'पीर' कह कर संबोधित किया जाता है । अन्य सन्तों में शरणनाथजी, गरीबनाथजी प्रभातनाथजी तथा कंथड़नाथजी का नाम विशेष उल्लेखनीय है । इन सन्तों की वाणी का कोई संग्रह नहीं मिलता । पद-संग्रहों में गोरखनाथ के कुछ पद अवश्य मिल जाते हैं, ठीक उसी तरह जैसे कबीर आदि सन्तों की वाणी गुजराती सन्तों की वाणी के बीच बीच मिल जाती है । 'गोरख-बानी' के कुछ पदों में गुजराती का विशिष्ट प्रभाव यत्र-तत्र इस प्रकार देखा जा सकता है —

'भणंत गोरषनाथ रूड़ा राषौ, नगरी चोर मलाया ।'[२]

'एणे सतगुरि अम्हे परणाव्या, अबला बाल कुंवारी ।
मछिंद्र प्रसाद श्रीगोरष बोल्या, माया नां मौ टारी ।।'[३]

'मछिंद्र प्रसादै जती गोरख बोल्या, नित नवेलड़ी थाये।'[४]

'मन पवना धोरी जोतावो, सतनां सांतीड़ा समथावो ।'[५]

---

१. श्री. दूलेराय काराणी क.स.क. पृ.२०४ ।
२. गोरखबानी, पृ. ६६ : ५।१०
३. गोरखबानी, पृ.१०६ : ५।१६
४. गोरखबानी, पृ.१०८ : ४।१७
५. गोरखबानी, पृ.१२५ : २।३१

इन पंक्तियों में रूडा, एणे, अम्हे, बोल्या, मायाना, प्रसादे, नवेलडी थाये, जोतावो, थावो आदि शब्दों में गुजराती का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है । यदि इन पदों को प्रामाणिक मान लिया जाय तो गोरखबानी पर गुजराती का प्रभाव सहज ही सिद्ध हो जाता है । गुजरात के सन्त-साहित्य पर गोरखपंथ का निम्न-लिखित प्रभाव देखा जा सकता है—

१. काम की घोर निन्दा तथा ब्रह्मचर्याचरण पर विशेष भार । सदाचरण की प्रवृत्ति ।
२. कथनी एवं करनी की समानता पर बल ।
३. इन्होंने गोरखपंथ के नैतिक एवं सामाजिक पक्ष को जितना अपनाया उतना साधना-पक्ष की कष्ट साध्य एवं दुरूह प्रक्रिया को नहीं ।
४. मत्स्येन्द्रनाथ की भाँति गुजरात के सन्तों ने मन: साधना पर विशेष भार दिया है ।

२. महानुभाव अथवा अच्युत-सम्प्रदाय :

ईसा की तेरहवीं शती में महाराष्ट्र में इस सम्प्रदाय का प्रादुर्भाव हुआ और धीरे धीरे यह गुजरात, पंजाब तथा काबुल तक फैल गया । यह सम्प्रदाय अनेकों नामों से अभिहित किया जाता है । महाराष्ट्र में यह मानभाव अथवा महात्मा पंथ, गुजरात में अच्युत संप्रदाय और पंजाब में जयकृष्णी पंथ कहलाता है ।[१] महात्मा चक्रधर इस पंथ के प्रवर्तक थे, जो मूल गुजरात के निवासी थे । इनका जीवन-परिचय आगामी परिच्छेद में दिया गया है ।

गुजरात में इस पंथ का विशेष प्रभाव दृष्टिगोचर नहीं होता । गुजरात में बसे हुए महाराष्ट्र के कुछ लोग ही इस पंथ के उपासक हैं । महानुभाव पंथ की सामान्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं —

१. हि.म.स.दे., आचार्य विनय मोहन शर्मा— पृ.६५ ।

:१: ज्ञान की अपेक्षा भक्ति को इन्होंने अधिक महत्व दिया है । इनका मानना है कि निराकार ईश्वर भक्तों पर अनुग्रह रखने के लिए साकार-रूप धारण करता है ।

:२: इन्होंने कृष्णभक्ति को अपनाया, किन्तु इनपर नाथपंथ का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है । इन्होंने नाथों के समान स्त्रीदर्शन को निषिद्ध ठहराकर नैतिक-चरित्र पर बल दिया है । जाति-पाँति के बन्धन को भी ये स्वीकार नहीं करते ।

:३: दर्शन के क्षेत्र में ये जीव, देवता, प्रपंच, परमेश्वर इन चार पदार्थों को अनादि मानते हैं । जीव कर्मों का भोक्ता है तथा जीव को प्रेरित करनेवाली माया है । जीव को मुक्त करने का सामर्थ्य देवताओं में भी नहीं है, ईश्वर ही मोक्ष-प्रदान कर सकता है ।

:४: यह पंथ "द्वैतवादी होते हुए भी बहुदेवोपासना का पक्षपाती नहीं है । यह वेदों में विश्वास नहीं करता अतः यह अवैदिक मत है । कुछ बातों में यह लिंगायत मत से साम्य रखता है ।[१]

३. रामानंद सम्प्रदाय :

स्वामी रामानंद ने जिस सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया वह श्री संप्रदाय, रामानंदी सम्प्रदाय, और रामावत सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध है । कुछ लोगों के अनुसार ये तीनों भिन्न सम्प्रदाय हैं । इस सम्प्रदाय के कुछ अनुयायी अवधूत कहलाते हैं और कुछ वैरागी । इन दोनों साधु-सम्प्रदायों में वेशभूषा और मान्यता आदि सम्बन्धी अन्तर भी है ।[२] स्वामी रामानंद :सं.१३५६ १५२६:[३] वस्तुतः युग प्रवर्तक आचार्य थे जिन्होंने अपनी विचारधारा से समस्त मध्यकालीन भक्ति-धारा को प्रभावित किया था । निर्गुण-काव्यधारा का

१. हि. म.स. देन, पृ.६९ ।
२. हि.नि.का.दा. पृ. २४-२५ ।
३. जगद्गुरु श्री रामानंदाचार्य, श्री. रामानंद पीठ, आबू से प्रकाशित ग्रन्थ के आधार पर ।

बीजारोपण करनेवालों में जहाँ जयदेव, नामदेव, त्रिलोचन आदि का नाम लिया जाता है वहाँ रामानन्द का स्थान सर्वोपरि है । रामानन्द के बारह शिष्यों में से अधिकांश की विचारधारा निर्गुण परक ही थी । कबीर, धन्ना, पीपा और सेन इसी पथ के पथिक थे । संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि निर्गुण-काव्यधारा की जो नींव स्वामी रामानंद ने डाली उस पर विशाल एवं मजबूत भवन बनाने का कार्य उन्हीं के शिष्य कबीर ने किया । इस सम्बन्ध में एक किंवदन्ती भी प्रसिद्ध है कि —

'भक्ति द्राविड़ ऊपजी लाये रामानन्द ।
परगट किया कबीर ने सप्त दीप नवखण्ड ।।'

सच तो यह है कि चौदहवीं तथा पंद्रहवीं शती की समस्त उत्तरी सन्त परम्परा जहाँ रामानन्द से प्रभावित है, उसी परम्परा की एक अक्षुण्ण धारा गुजरात की ओर प्रवाहित होती हुई दीख पड़ती है । इस सम्बन्ध में डॉ.के.एम.मुन्शी का कथन उचित ही है कि —

'Ramananda's influence in Gujarat was widespread in the latter half of the fourteenth and the fifteenth century. It taught the learned not to spurn the lowly and the literate, but to work with and for them through the medium of their own language.'[1]

वस्तुतः शंकराचार्य का मायावाद क्योंकि शुष्क था, इसलिए भक्ति धर्म को प्रधानता मिली । स्वामी रामानुज तथा निम्बार्क ने भागवत धर्म की प्रतिष्ठा कर इसका व्यवस्थित स्वरूप प्रदान किया । इसके पश्चात् रामानंद हुए जिन्होंने संस्कृत की अपेक्षा प्राकृतभाषा में धर्मोपदेश देकर सर्वसामान्य के लिए भक्ति के द्वारा खोल दिये । इस प्रकार उन्होंने पुरानी जर्जर परम्पराओं को तोड़ा तथा स्वतन्त्र-मार्ग का सर्जन कर भक्ति की धारा को अक्षुण्ण बनाये रखने का सबसे सबल प्रयत्न किया ।

1. Gujarat & its Literature Dr. K.M.Munshi - Page 116.

स्वामी रामानन्द के शिष्यों ने इसी रामभक्ति का प्रचार गुजरात के कोने-कोने में किया था । स्वामी रामानंद की दिग्विजय यात्रा में 'गुजरात का विशिष्ट उल्लेख मिलता है ।[१] इन्होंने स्वयं द्वारका, सिद्धपुर, गिरनार और आबू आदि विभिन्न स्थानों का भ्रमण कर अपने मत का प्रचार किया था ।[२] आबू और जूनागढ़ की पहाड़ियों पर स्वामीजी के चरण-चिन्ह मिलते हैं ।[३]

प्रभाव :

मध्यकालीन गुजराती साहित्य पर स्वामी रामानंद का प्रभाव स्पष्ट रूपेण परिलक्षित होता है, इसकी पुष्टि डॉ.क.मा.मुन्शी ने अपने ग्रन्थों में जगह-जगह की है । भालण के काव्य में 'भालण प्रभु रघुनाथ' की स्पष्ट छाया इसका पुष्ट प्रमाण है । भालण के पुत्र उद्धव ने भी इसी से प्रभावित होकर सम्पूर्ण 'रामायण' की रचना की जिसे उन्हीं के पुत्र विष्णुदास ने पूर्ण किया था ।[४] इस प्रकार गुजरात में रामभक्ति का प्रचार हम सोलहवीं शती के आसपास देख सकते हैं ।[५] गुजरात के ज्ञानमार्गी सन्तों पर भी रामानंदी प्रभाव देखा जा सकता है । मांडण कृत 'रावण-मन्दोदरी-संवाद' : सं.१५७६ पूर्व : की रचना पर इसका प्रभाव है । गुजरात के अधिकांश सन्तों ने रामानंदी साधुओं से दीक्षा ग्रहण कर ज्ञान गंगा में अवगाहन किया है, जिनमें भोजो, धीरो, प्रीतम, छोटम, कुबेरदास, आदि का नाम विशेष रूपसे लिया जा सकता है । इनकी बानियों पर रामानंदी प्रभाव की छाप पड़ना नितान्त स्वाभाविक है । गुजरात में रामानंद सम्प्रदाय के प्रचार एवं प्रसार में अनेक गद्य-रचनाएँ भी लिखी गयी हैं, जो हिन्दी को एक अनूठी देन हैं । डाकोर से प्रकाशित 'सिद्धान्त-मटल' नामक ग्रन्थ स्वामी रामानंद रचित बताया जाता है जिसमें अनेक विषयों के मन्त्र हैं, तथा जिनकी भाषा सधुक्कड़ी है ।[६] इस दिशा में शोध खोज की विशेष आवश्यकता प्रतीत

---

१. रामानंद सम्प्रदाय तथा हिन्दी साहित्य पर उसका प्रभाव पृ.९-१० ।
२. देखिए - जगद्गुरु श्री रामानंदाचार्य ।
३. हि.का.नि.सं. डॉ. पीताम्बरदत्त बडथ्वाल पृ.९९ ।
४. म.सा.प्र. डॉ.क.मा.मुन्शी पृ. १९-२० ।
५. वही , वही पृ.३२२ ।
६. हि.का.नि.सं. डॉ.पिताम्बरदत्त बडथ्वाल पृ.९९ ।

होती है ।

४. कबीर पंथ :

'कबीर वड' जोकि नर्मदा के तट पर अब भी खड़ा है — इसे लेकर एक किंवदन्ती सर्वप्रसिद्ध है कि कबीर अपने मत का प्रचार करने के लिए गुजरात आये थे । कबीर साहब के कुछ भजन गुजराती भाषा में भी लिखे मिलते हैं, किन्तु इनकी प्रामाणिकता संदिग्ध ही है । आचार्य परशुराम चतुर्वेदी[१] तथा क्षितिमोहन सेन[२] ने कबीर के गुजरात एवं सौराष्ट्र भ्रमण का उल्लेख किया है । कुछ लोग कबीर के पुत्र कमाल द्वारा गुजरात में कबीरमत के प्रचार का उल्लेख करते हैं ।[३] कुछ भी हो किन्तु इतना अवश्य मानना पड़ेगा कि गुजरात का समस्त सन्त-साहित्य कबीर से प्रत्यक्ष एवं परोक्ष दोनों रूपों में प्रभावित है । संभवतः गुजरात का ऐसा कोई गाँव शेष नहीं जहाँ कोई छोटा मोटा कबीर मन्दिर तथा कबीर मतावलम्बी न पाया जाता हो । गुजरात में कबीर पंथ की एक सुदीर्घ परम्परा अबतक चली आ रही है ।

यों समस्त गुजरात में कबीर-संप्रदाय से सम्बन्धित अनेक पंथ एवं उपपंथ प्रचलित हैं, किन्तु दो पंथों का नाम विशेष रूप से लिया जाता है ।[४]

१. राम कबीरिया पंथ । २. सत कबीरिया पंथ

१. राम कबीरिया पंथ :

कबीर को राम का अवतार मानने वाले राम-कबीरिया पंथ में दीक्षित भगवा वस्त्र पहनते हैं, सिर पर टोपी लगाते हैं, गले में माला और कान में श्रवणी डालते हैं । इसके मूल प्रवर्तक के रूप में कबीर के शिष्य पद्नाभ का नाम लिया जाता है और यह कहा जाता है कि उनके एक शिष्य नीलकंठ ने इनसे दीक्षित होकर

---

१. उत्तरी भारत की सन्त परम्परा पृ.२८७ ।
२. Medeival Myslision of India Page 98.
३. हि.का.नि.स. पृ. ११८ डॉ. बडथ्वाल ।
४. चरोतर सर्व संग्रह पृ.८२२ ।

गुजरात तथा काठियावाड़ की ओर यात्रा की थी ।[१] किन्तु, र.भा.स. के एक प्रमुख सन्त मोरार साहब के शिष्य दलुराम साहब द्वारा रची गयी एक परम्परा के अनुसार नीलकंठ पद्मनाभ के शिष्य न होकर धीरदास के शिष्य थे जो कबीर साहब की छट्ठी पीढ़ी में थे । उनके अनुसार कबीर साहब स्वामी रामानंद के शिष्य थे और वे स्वयं ज्योति रूप तथा अलख स्वरूप थे । संतलोग उन्हें राम कबीर कह कर उनका गुणगान करते हैं तथा वे स्वयं भी अपने आप को यही कहते थे ।[२] इसी पंथ के सोरठी आद्यभक्त के रूप में भाण साहब का नाम लिया जाता है । भाण साहब द्वारा प्रवर्तित तथा रविसाहब द्वारा संवर्द्धित सम्प्रदाय 'रविभाण सम्प्रदाय के नाम से समस्त गुजरात में प्रचलित है । इसकी मुख्य गद्दियाँ शेरखी : बड़ौदा के पास : जामनगर और रापर : कच्छ : में हैं । इस सम्प्रदाय की नींव में भाण साहब का अपूर्व बलिदान तथा रवि साहब, मोरार साहब आदि सन्तों की वाणी है जिसने लोकहृदय में अब भी अपना अक्षुण्ण स्थान बना रखा है यद्यपि इस वाणी पर दो सौ वर्षों का काल चक्र घूम चुका है । कच्छ, काठियावाड़ और गुजरात की जनता आज भी इन सन्तों की वाणी को बड़े चाव से सुनती है और गाती है ।

'रविभाण सम्प्रदाय' की एक लम्बी प्रणालिका साम्प्रदायिक ग्रन्थों के आधार पर इस प्रकार उपलब्ध होती है :-

---

१. उ.भा.स.प. आ. परशुराम चतुर्वेदी । पृ.२६१ ।
२. वही वही पृ.२६२ ।

सद्गुरु कबीर साहब
|
पद्मनाभ साहब
|
नीलकंठ साहब
|
रघुनाथ साहब
|
यादवदास साहब
|
षष्ठमदास साहब
|
भाणसाहब — लब्धाराम

भाण साहब के दो प्रकार के शिष्य हुए :—

१. नाद शिष्य— रवि साहब ।

२. बिन्दु शिष्य— खीम साहब ।

भाण साहब के प्रमुख शिष्यों में रविसाहब तथा खीम साहब थे ।[१] इनकी शिष्य परम्परा तथा प्रमुख गद्दियाँ इस प्रकार हैं

रविसाहब की शिष्य परम्परा
:प्रमुख गद्दी शेरखी :

मोरार साहब
:जामनगर खंभालिया में गद्दी प्रस्थापित की :
- बालजी रामजी :बम्बई में गद्दी :
- अगदास :जाम खंभालिया में :
  - छोटालाल
- होथी
  - चरणदास :सं.१९२७:
  - जेरामदास :सं.१९३९:
  - रणछोडदास :सं.१९५५:
  - औधवदास :सं.१९६४:
- जीवा

रामदास
:शेरखी की मुख्य गद्दी :
- वालदास :सं.१८८८:
- रेवादास :सं.१९१०:
- राधिकादास :सं.१९२८:
- राघवदास :सं.१९५९:

१. भाण साहब के शिष्यों की संख्या बहुत बड़ी थी । चालीस शिष्यों की एक विशाल फौज 'भाण फौज' के नाम से प्रसिद्ध थी जो हमेशा भाण साहब के साथ रहती थी ।

खीम साहब की शिष्य परम्परा

: कमींजड़ा की गादी :

- त्रिकम साहब
  - भीम
    - जीवणदास : दासीजीवण :
- रामदास : कमींजड़ा की गादी :
  - लालदास : सं.१९४२–१९५२ :
    - विष्णुदास : सं.१९५२–६६ :
      - देवीदास : सं.१९७०–८४ :
        - हीरादास : सं.१९८४ ... :

खीम साहब

: रापर : कच्छ : की गादी सं.१८३७ में स्थापित :

- गंगाराम : खीम साहब का पुत्र : : रापर की गादी : : सं.१९५७–१९३१ :
  - सुन्दरदास : भाण परचरी के अन्तिम चार विश्राम के रचयिता :
    - मोहनदास : सं.१९४६ में समाधिस्थ :
      - अमरदास : सं.१९८७ में समाधिस्थ :
        - रघुवरदास : सं.१९८७ में समाधिस्थ :
          - वीसरामदास : सं. १९८७ से .... :
- मलूकदास : अंजार में गादी :
  - केशवदास
    - सुन्दरदास
    - वल्लभदास
  - पुरुषोत्तम

सत कबीरिया पंथ :

धर्मदासी परम्परा के अनुयायी अपने गुरु की तस्वीर अथवा मन्त्र देनेवाले गुरु की पूजा करते हैं । इस मत के अनुयायी सतकबीरिया कहलाते हैं । कबीर-आश्रम जाम नगर की गुरु-प्रणालिका का सम्बन्ध धरमदासी-परम्परा के साथ जोड़ा जाता है[१]. जो इस प्रकार है :

कबीर
|
धर्मदास
|
चूरामणि : वंशज :
|
खेमदास : वंश, परम्परागत
| संवत् १८२४ :
निर्भयदास : सं.१८३६ :
|
जीवनदास : सं.१८५६ :
|
मोहनदास : सं.१९०६ :
|
अमरदास : सं.१९३१ :
|
पुरुषोत्तमदास : सं.१९४० :
|
शान्तीदास : सं.१९०५ :
|
रामस्वरूपदास : वर्तमान :

निर्वाण साहब की परम्परा :

कबीर साहब की एक अन्य शाखा निर्वाण साहब की परम्परा के नाम से प्रसिद्ध है । इस शाखा के प्रवर्तक निर्वाण साहब

---

१. 'अथ ग्रंथ ब्रह्म निरूपणम्' —
प्रका. महन्त श्री स्वरूपदासजी, कबीर आश्रम, जामनगर ।

थे जिन्होंने सूरत में अपनी गद्दी स्थापित की । इस गद्दी के तीसरे पुरुष संत हीरादास : सं.१५५०—१६३५ : थे । निर्वाण साहब की शिष्य परम्परा में कुछ प्रमुख सन्तों की नामावली इस प्रकार है—

समर्थदास : सं.१५५० १६१० :
|
माधवदास : सं.१६०१ :
|
प्यारेदास : सं.१६२५ :

कबीरपंथ की अन्य शाखाओं में काठियावाड का मूल निरंजन पंथ, बडौदा का टकसारी पंथ, भड़ौंच का जीवा पंथ[१] आदि का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है । इन शाखाओं की कोई व्यवस्थित परम्परा मेरे देखने में अब तक नहीं आयी है । राम कबीरिया पंथ की ही तरह दान कबीरिया, मंगल कबीरिया, हंस कबीरिया, उदासी कबीरिया आदि अनेक शाखाएँ प्रचलित हैं, किन्तु इनका कोई व्यवस्थित इतिहास उपलब्ध नहीं होता । इतना निश्चित है कि अक्षयवट की तरह कबीरपंथ की विशाल शाखाएँ गुजरातभर में प्रसरित हैं । इन सभी पंथों की कुछ सामान्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं —

:१: सभी सन्त अपने नाम के आगे 'साहब' अथवा 'दास' शब्द जोड़ते हैं ।

:२: कच्छ के सन्तों की भाँति प्राय: ये भी जीवित समाधि लेते हैं ।

:३: गृहस्थ होकर तथा बस्ती में रहकर भी वे सांसारिकता से अलिप्त तथा अन्तर से विरक्त हैं ।[२]

---

१. कहा जाता है कि जीवा और तत्वा नामके दो भाई थे । यद्यपि थे तो ब्राह्मण, किन्तु बाबा वाक्य के पुजारी बनना उन्हें इष्ट नहीं था अत: उन्हें एक ऐसे गुरु की शोध थी जो सूखे ठूँठ को हरा-भरा कर दे । कानम में उन्हें कबीर साहब का साक्षात्कार हुआ और कबीर साहब की प्रेरणा से उन दोनों भाइयों के हाथों 'कबीर वड़' पल्लवित हुआ ।
चरीतर सर्व संग्रह पृ. ८२२ ।

२. 'बस्ती में रैना, जोगी मांगी के खाना
घरोघर अलख जगाना मेरे लाल' — त्रिकम साहब ।

:४: इन सन्तों की अधिकांश रचनाएँ सधुक्कड़ी हिन्दी में हैं ।

:५: साम्प्रदायिकता का इनमें अभाव है ।

:६: कबीर की भाँति इनकी वाणी में भी गुरु महिमा, नाम स्मरण, ब्राह्माचारों का खंडन मंडन, जाति-पाँति का बहिष्कार, समन्वय की भावना, प्रेम लक्षणा भक्ति की तन्मयता, कथनी तथा करनी में एक सूत्रता के गुण मिलते हैं ।

:७: संगीत की प्रधानता ।

५. दादू-पंथ :

दादूपंथ का दूसरा नाम परब्रह्म सम्प्रदाय भी है । इसके प्रवर्तक सन्त दादूदयाल थे जिन्होंने कबीर की भाँति देश-देशान्तरों का पर्यटन कर अपने मत का प्रचार किया था । दादू-सम्प्रदाय के देशभर में ५२ महत्वपूर्ण अखाड़े हैं । इनकी अधिकांश संख्या जयपुर, अलवर, मारवाड़, बीकानेर, मेवाड, पंजाब और गुजरात में पायी जाती है । काशी में भी इस पंथ का एक अखाड़ा है, किन्तु दादू के अवसान के पश्चात् इन अखाड़ों का कोई महत्व नहीं रह गया है । यह पंथ दो शाखाओं में विभक्त है —

:१: भेषधारी विरक्त साधू — जो गेरुआ वस्त्र धारण कर भजन और पठन-पाठन में अपना समय व्यतीत करते हैं । इन वैरागियों के पाँच भेद माने गये हैं :- खालसा, नागा, उत्तरादी, विरक्त और खाकी ।

:२: सेवक-साधू — जो सफेद वस्त्र धारण कर खेतीवाड़ी, फौजी नौकरी और वैद्यकी आदि करते हैं तथा कुछ सूद पर रुपये चलाते हैं ।

दादूपंथ कबीरपंथ की तरह व्यापक और महत्वपूर्ण है । इन दोनों में निम्नलिखित अन्तर है —

:१: कबीरपंथी माथे पर तिलक लगाते हैं और गले में कंठी पहनते हैं, किन्तु दादूपंथी इसके विरोधी हैं । ये लोग टोपी या मुरायठ पहनते हैं और सत्तराम कहकर अभिवादन करते हैं ।

:२: कबीर में खंडन मंडन की प्रवृत्ति है, जबकि दादू की वाणी में इसका अभाव है । दादू के उपदेश के विषय थे— :१: परमेश्वर की उपासना और अजपाजाप । :२: मन: संयम के साधन । :३: परमेश्वर का सच्चिदानंद-स्वरूप :४: भगवान के परम रूप का ध्यान और धारणा :५: अमृत-बिन्दु का पान । :६: ब्रह्म का साक्षात्कार :७: अनहद-बाजा में निमग्न होना । :८: निराकारोपासना ।

दादूपंथ की प्रमुख गद्दी नराणा : राजस्थान : में है जहाँ प्रतिवर्ष बहुत बड़ा मेला लगता है और दादू की खड़ाऊँ की पूजा की जाती है । गुजरात में कबीरपंथ का जितना जोर है, उतना दादू पंथ का नहीं ।

कुछ सन्त-कवि ऐसे अवश्य हैं जो अपनी विचारधारा और अभिव्यक्ति-शैली में दादू का अनुसरण करते प्रतीत होते हैं, किन्तु यह कह सकना प्राय: कठिन है कि वे कबीर पंथ से प्रभावित न होकर मात्र दादू-पंथ के ही अनुयायी हैं । दादू यद्यपि गुजरात में जन्मे : सं. १६०१ : थे, किन्तु उनकी साधना भूमि राजस्थान रही । दादू ने हिन्दी के साथ-साथ गुजराती में भी रचनाएँ की हैं जिनकी प्रतियाँ गुजरात में उपलब्ध हैं । दादू के अनुयायियों में से सुन्दरदास आदि सन्तों ने भी गुजराती में रचनाएँ की हैं । यह एक विचारणीय तथ्य है । दादूपंथी साहित्य का अनुशीलन करने से यह तथ्य भी प्रकाश में आता है कि उनका अपने सतगुरु की जन्मभूमि-गुजरात और वहाँ की भाषा-गुजराती के प्रति सहज आकर्षण रहा है ।

६. प्रणामी पंथ :

कबीर पंथ को छोड़ कर शेष सभी सम्प्रदायों और पंथों में प्रणामी-पंथ का गुजरात में सर्वाधिक महत्त्व रहा है । इस पंथ के संस्थापक निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्र थे जिनकी जन्म तिथि संवत् १६३८ आश्विन शुक्ला चतुर्दशी तथा मृत्यु तिथि सं.१७१२ आश्विन कृष्णा चतुर्दशी मानी जाती है ।[१] इनका जन्म-स्थान उमरकोट : मारवाड़ :तथा विदेह स्थान जामनगर था । इनके पिता का नाम मतु मेहता तथा माता का नाम कुंवरबाई था । सं. १६५५ में इन्होंने कच्छ की ओर प्रयाण किया तथा ज्ञान की भूख को मिटाने के लिए तथा ब्रह्म साक्षात्कार की उत्कट अभिलाषा में इन्होंने वहाँ के दत्त सम्प्रदायी एवं कनफटा योगियों से दीक्षा ली किन्तु फल कुछ न मिला । अन्त में स्वामी श्री हरिदास से गुरु मन्त्र लेकर तारतम्य प्राप्ति की ।[२] प्रणामी मतानुयायियों का मानना है कि पूर्ण ब्रह्म की शक्तियों को माया से छुड़ाने के लिए तथा उन्हें जाग्रत करने के लिए श्री कृष्ण ने अपनी अंगजा श्री श्यामाजी को श्री देवचन्द्रजी के रूप में भेजा था ।[३] इन्होंने जामनगर में प्रणामी धर्मपीठ की स्थापना सं.१६८७ में कार्तिक मास में की थी जो आज भी 'खिजड़ा-मन्दिर' के नाम से प्रसिद्ध है । कहा जाता है कि स्वामी देवचन्द्र ने मन्दिर के आस-पास दो खिजड़ा के वृक्ष लगाये थे इसी पर से इस मन्दिर का नाम 'खिजड़ा-मन्दिर' पड़ा ।

स्वामी देवचन्द्र का नियम था कि ब्रह्मसृष्टि की वासना को परखे बिना वे किसीको तारतम्य की दीक्षा नहीं देते थे । तारतम्य में वस्तुतः धाम, परमधाम, ब्रज मंडल और रास-मंडल की चर्चा की गयी है । इस अखण्ड-लीला का वर्णन उन्होंने सर्व-प्रथम गांगजीभाई के आप्तजनों के सम्मुख किया और उन सभीने तारतम्य ग्रहण कर जागृति प्राप्त की ।

---

१. साहित्य-सन्देश :संत विशेषांक : अगस्त १९५८, श्री.मिश्रीलाल शास्त्री पृ.६२ ।
२. निजानंद चरितामृत, पृ. २१३ ।
३. देखिए — 'सुन्दर-सागर'-भूमिका, पृ.२५ — २६ ।

इस पंथ के प्रचार, प्रसार एवं निर्माण का सारा श्रेय स्वामी प्राणनाथ : सं.१६७५–सं.१७५१ : को है जो बारह वर्ष की अवस्था में ही इस पंथ में दीक्षित हो गये थे । प्रणामी पंथ को धामी–सम्प्रदाय भी कहा जाता है । इस पंथ के अनुयायी अपने को मूलत: ब्रह्मधाम का निवासी तथा ब्रह्म–शक्तियों का रूप मानते हैं । अत: वे जब भी परस्पर मिलते हैं तो वे इसी वास्तविक रूप को ध्यान में रखकर `प्रणाम` करते हैं ।

स्वामी प्राणनाथ ने इस मत के प्रचार एवं प्रसार में गुजरात, मेवाड़, मारवाड़, मालवा होते हुए उत्तर-भारत की यात्राएँ कीं, जहाँ उन्होंने दो संस्कृतियों के बीच होने वाले अमानवीय संघर्षों को देखा । अत: साम्प्रदायिकता की इस विषम भावना को दूर करने के लिए भारतीय एवं विजातीय भावनाओं का ऐसा अपूर्व समन्वय किया जिसमें न वेषभूषा का प्रश्न था और न वर्ग-संघर्ष का सवाल । कबीर ने तो मात्र हिन्दू-मुस्लिम एकता की ही बात कही, किन्तु प्राणनाथ ने तो कुरान, गीता, बाइबल, इंजिल तथा जेन्दोबास्ता की समानता दिखाकर लोगों को जिस एकात्मवाद का सन्देश दिया, उसीने आगे चलकर रामकृष्णमिशन, थियोसोफिकल सोसायटी प्रभृति संस्थाओं के प्रणयन में नींव का काम दिया ।

गुजरात में प्रणामी पंथ के प्राय: पचास से भी अधिक मन्दिर हैं । इन मन्दिरों में मुरली, मुकुट और स्वामी प्राणनाथ विरचित `श्रीमुख-वाणी` की पूजा होती है । इस पंथ की मुख्य गद्दियाँ पन्ना : बुन्देल खण्ड : नवतनपुरी : जामनगर : और सूरत में हैं । स्वामी देवचन्द्र जी के पश्चात् जामनगर की गादी गृहस्थ गादी तथा सूरत की गादी फकीरी गादी कहलायी । गृहस्थ गादी के अधिकारी स्वामी देवचन्द्र के पुत्र बिहारीलाल थे जबकि सूरत की फकीरी गादी स्वामी प्राणनाथ से शुरू हुई । सूरत की फकीरी गादी की परम्परा इस प्रकार मिलती है –

श्यामदास महाराज
|
गोपालदास महाराज
|
मोहनदास महाराज
|
पीताम्बरदास महाराज
|
रंगीनदास महाराज
|
गोपालदास
|
मेहराजदास
|
मंगलदास

प्रणामी-पंथ की कुछ निजी विशेषताएँ इस प्रकार हैं :

:१: इस पंथ का नाम महेराज पंथ भी है । अन्य नाम खिजड़ा और चकला भी सुने जाते हैं ।

:२: इस सम्प्रदाय के अनुयायी भाई, साची भाई कहलाते हैं ।

:३: ये कृष्ण के बाल स्वरूप का ध्यान करते पाये जाते हैं । तुलसी की माला धारण करते हैं, ललाट पर कुंकुम का खड़ा तिलक लगाते हैं । ये मूर्तिपूजा में विश्वास नहीं करते ।

:४: इनमें मांस, मदिरा और जाति व्यवस्था का निषेध है । दीक्षा के अवसर पर हिन्दु मुसलमानों का सहभोज होता है । नैतिक आचरण और चरित्र शुद्धि पर इनका विशेष जोर रहता है ।

७. <u>सूफी-सम्प्रदाय :</u>

भारत वर्ष में इस्लाम धर्म का प्रवेश यों तो आठवीं शती में ही

गया था तथा सिन्ध एवं पंजाब का हिस्सा इस्लाम धर्म के प्रचार एवं प्रसार का प्रमुख केन्द्र बन गया । फिरभी, तेरहवीं-चौदहवीं शती में मुस्लिम धर्म-प्रचारकों और सूफियों का पूरा जोर हम देश के विभिन्न भागों में देखते हैं । बारहवीं शती के उत्तरार्द्ध में जब मुहम्मद गोरी ने भारत पर आक्रमण किया उस समय उच : बहावलपुर : इस्लामी विद्या का बहुत बड़ा केन्द्र था । यहीं से सिन्ध गुजरात और दक्षिण पश्चिमी पंजाब में इस्लाम धर्म का प्रचार हो रहा था । इसके पश्चात् यहाँ पर कई सूफी साधक आये ।[१] डा. रामकुमार वर्मा ने सूफी धर्म का प्रवेश ईसा की बारहवीं शताब्दी में माना है तथा इसके प्रमुख चार सम्प्रदायों का उल्लेख किया है जो समय समय पर देश में प्रचारित हुए[२] —

१. चिश्ती-सम्प्रदाय-सन् बारहवीं शताब्दी का उत्तरार्ध ।
२. सुहरावर्दी सम्प्रदाय-सन् तेरहवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध ।
३. कादरी सम्प्रदाय-सन् पंद्रहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध ।
४. नक्शबंदी-सम्प्रदाय-सन् सोलहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध

ये चारों सम्प्रदाय अपने मूल सिद्धान्तों में समान थे । धार्मिक और सामाजिक पक्षों में ये सभी सम्प्रदाय अत्यन्त उदार थे ।[३] इनमें सामाजिक एकता और समानता पर विशेष बल दिया गया है । फल यह हुआ-कि हजारों और लाखों की संख्या में हिन्दू धर्म के विविध वर्णों के असन्तुष्ट सदस्य सूफी सन्तों के चमत्कारों से प्रभावित होकर और उनकी सात्विकता और सहिष्णुतासे आकर्षित होकर इस्लाम धर्म के अन्तर्गत सूफी सम्प्रदाय में दीक्षित हुए और भारत में मुसलमानों की संख्या बरसाती नदी की भाँति बढ़ती ही गयी ।[४] कहते हैं कि कच्छ और गुजरात में पीरान के इमाम शाह ने इस्लाम धर्म में बहुतों को दीक्षित किया । कच्छ में ऐसे लोग रावलशाह पीर की पूजा करते हैं ।[५]

---

१. सूफीमत साधना और साहित्य — पृ.४०९-१० ।
२. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृ.३०२ ।
३. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृ.३०३ ।
४. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृ.३०४ ।
५. सूफी-साधना और साहित्य, पृ.४१६-१७ ।

गुजरात की बोहरा जाति अब्दुल्ला को अपना प्रथम धर्म प्रचारक मानती है। ईसा की बारहवीं शती में पर्सिया का इस्माइली धर्म प्रचारक अलामूत नूर सतागर अथवा नूर सौदागर सिद्धराज के काल में गुजरात में आया था जिसने गुजरात की निम्न हिन्दू जाति कणबी, खरवा, कोरी आदि को मुसलमान बनाया था।

अजमेर के प्रसिद्ध सूफी सन्त ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती : मृत्यु सन् १२३६ : का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है जिनकी शिष्य परम्परा गुजरात तक फैली हुई प्रतीत होती है। अनवर और सत्तार शाह चिश्ती इसी परम्परा की कड़ियाँ हैं। इसी प्रकार सत्तारी सम्प्रदाय के अन्तर्गत ग्वालियर के शाह मुहम्मद गौस के शिष्य एवं उत्तराधिकारी वजीहुद्दीन का नाम गुजरात के सूफियों में अत्यन्त आदरपूर्वक लिया जाता है। भारत में इसके प्रवर्तक फारस के अब्दुल्ला सत्तारी थे। इस सम्प्रदाय के सन्त क़ादरी सम्प्रदाय वालों की तरह वस्त्र धारण करते हैं तथा चिश्ती और कादरियों के साथ 'बेनवा' कहे जाते हैं।[१] गुजरात के अन्य सूफी सन्तों में खूब मुहम्मद चिश्ती, बहीद, महमूद बरियायी, मोहम्मद अमीन, रमजान अली, शाम, शाह अली गाम धनी, शेख बहाउद्दीन बाझन, सन्त शेख अबु शकू तथा सागर आदि का नाम विशेष रूप से ले सकते हैं।

८. दत्त सम्प्रदाय :

महाराष्ट्र में इसका पुनरुद्धार पंद्रहवीं शती में हुआ। दत्त त्रिमूर्ति देवता हैं जिनमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश का सम्मिलन है, जिन्होंने वैदिक-धर्म की प्रतिष्ठा की। इस सम्प्रदाय के अन्तर्गत अद्वैत की प्रतिष्ठा सगुण साधना की नींव पर की गयी है तथा जिसमें लोक-विरुद्ध आचार-पालन का निषेध और योग मार्ग को ग्रहण करने का निर्देश किया गया है। गुजरात में

१. सूफी-साधना और साहित्य, पृ. ४१६-४१७

इस सम्प्रदाय का आगमन श्री वासुदेवानंद सरस्वती द्वारा हुआ जिनके शिष्य रंग अवधूत ने नारेश्वर में दत्त आश्रम की स्थापना कर दत्तोपासना का प्रचार एवं प्रसार किया ।

९. राम सनेही सम्प्रदाय :

संवत् १७९८ में जोधपुर के स्वामी रामदास[१] ने राम सनेही पंथ की स्थापना की जिसका कुछ प्रभाव गुजरात में भी देखा जाता है । यह मत मुसलमानी मत से बहुत कुछ मिलता है । इसके अन्तर्गत मूर्ति पूजा को स्थान नहीं । दिन में नमाज की तरह पाँच बार निराकार ईश्वर की आराधना होती है । इसमें जाति-पाँति का कोई भेद-भाव नहीं तथा सदाचार पर विशेष भार दिया गया है ।[२] गुजरात में राम सनेही अधिकतर अहमदाबाद, सूरत, बम्बई, बलसार आदि स्थानों में पाये जाते हैं । ये गले में माला और माथे पर श्वेत तिलक धारण करते हैं । काठ के कमंडल में ये जल पीते हैं । मिट्टी के बर्तनों में वे भोजन करते हैं । जीव-हत्या से ये परहेज करते हैं । वर्षाऋतु में ये घर से बाहर इसलिए नहीं निकलते क्योंकि उस समय जीव जन्तुओं के कुचले जाने की आशंका रहती है । इनमें से अधिकांश साधू मौनी अथवा बैदही होते हैं । पंथ में दीक्षित होने के लिए ४० दिन तक दीक्षा दी जाती है । पंथ के संगठन् के लिए आरम्भ से ही १२ व्यक्तियों का सम्प्रदाय चला आता है । किसी के मरते ही योग्य व्यक्ति द्वारा इसकी पूर्ति कर दी जाती है । मुख्य महन्त की मृत्यु पर उत्तराधिकार के लिए एकत्र ग्रहस्थों द्वारा योग्यता के दृष्टिकोण से महन्त का चुनाव होता है । मुख्य महन्त शाहबाद ही में रहता है ।[३] गुजरात के राम सनेही सन्तों में समर्थदास : मृ.सं.१९९३ : का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिन्होंने 'ध्रुवचरित' जैसे बृहद काव्य की रचना हिन्दी में की है । ये खेडापा के सन्त मनसुखदान की शिष्य परम्परा में आते हैं । शाहपुरा : राजस्थान : रैण : राजस्थान : और खेडापा : राजस्थान : इस सम्प्रदाय के प्रमुख केन्द्र हैं ।

१.डा.रामकुमार वर्मा ने इनका नाम रामचरण बताया है जिनका जन्म सं.१७१८ में सूरसेन : जयपुर में हुआ था ।ये पहले रामोपासक थे बाद में मूर्तिपूजा के घोर विरोधी हो गये । : देखिए हि.सा.आ.इ. पृ.२०८ :
२.हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृ.२८८ ।
३.संत साहित्य, सुदर्शनसिंह मजीठिया पृ.१०६ ।

१०. अन्य सम्प्रदाय :

:अ: अखा प्रणालिका :

कबीर की भाँति अखा भी सम्प्रदाय या पंथ-प्रवर्तन के विरोधी थे । उन्होंने अपने जीवन काल में किसी को शिष्य नहीं बनाया[१]. किन्तु उनके पश्चात् कुछ ऐसे अनुगामी हुए जिन्होंने अपने को अखा का शिष्य बताया और इस प्रकार की परम्परा धीरे-धीरे विकसित होती गयी । अखा के शिष्यों की इस परम्परा का नाम अखा-प्रणालिका है । इस प्रकार की एक प्रणालिका सागर महाराज द्वारा बनायी हुई मिलती है, जो जगजीवन स्वामी से शुरू होती है[२]. —

क्रमांक — १.

ॐ
|
जगजीवन स्वामी
|
ब्रह्मानंद स्वामी
|
नरहरदास | अखाजी | बूटाजी | गोपाल

१. 'शिष्य मेरा कोई नहीं, गुरु सारा संसार'
—अखो ।

२. देखिए — 'अक्षय रस' पृ.३२ ।

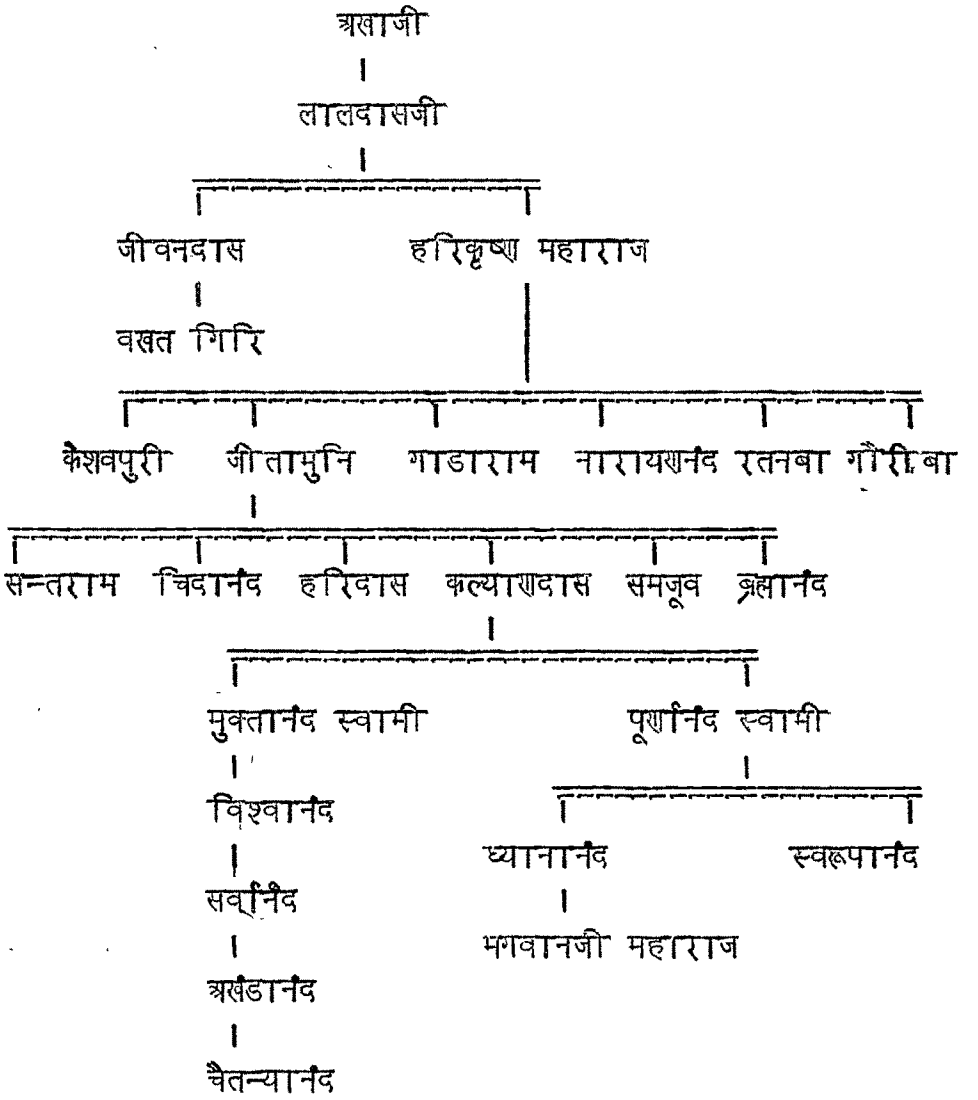

क्रमांक — २.

जीतामुनि की शिष्य परम्परा[१].

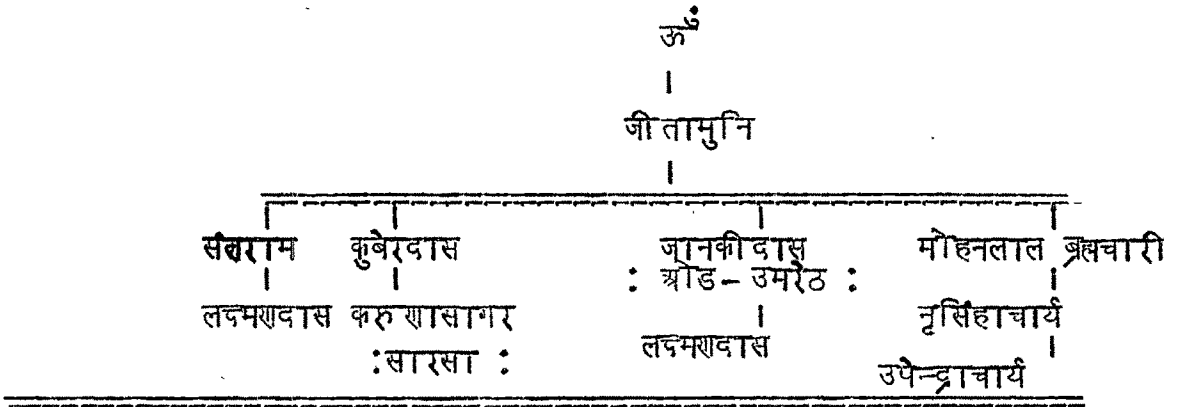

१. अक्षय रस, पृ.३३ के आधार पर ।

इस प्रणालिका में ब्रह्मानंद को अखा, नरहरि, बूटो और गोपाल का गुरु बताया गया है । किन्तु विद्वानों में इस विषय की खूब चर्चा हुई है[१]. तथा अधिकांश इस निर्णय पर पहुँचे हैं कि उक्त चारों ज्ञानी कवियों का कोई एक गुरु होना संदिग्ध ही है क्योंकि गोपाल ने तो 'सोमराज' को अपने गुरु के रूप में जगह-जगह उद्धृत किया है जबकि नरहरि और बूटाजी इस विषय में मौन हैं और अखाजी में जहाँ जहाँ ब्रह्मानंद शब्द का उल्लेख मिलता है वह व्यक्ति-विशेष के अर्थ में सूचित न होकर 'ब्रह्म के आनंद' के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है, ऐसा प्रतीत होता है। दूसरे, क्रमांक-२ में जीतामुनि के साथ सन्तराम, कुबेरदास, जानकीदास आदि का जो सम्बन्ध जोड़ा गया है उसका भी कोई ठोस आधार प्रतीत नहीं होता, क्योंकि सन्तराम-मन्दिर : नडियाद : कुबेरदास के सारसा-मन्दिर : आनन्द : और जानकीदास के ओड-मन्दिर के वर्तमान महन्तों से इस सम्बन्ध में पूछताछ करने पर भी हमारे उपर्युक्त मत की ही पुष्टि होती है । और कुबेरदास की रचनाओं में कहीं पर भी अखाजी का कोई उल्लेख नहीं मिलता । इस रूप में जब तक इस प्रणालिका के सम्बन्ध में कोई प्रामाणिक तथ्य उपलब्ध न हो, तब तक इसे संदिग्ध ही कहा जायगा ।

कहान्वा बंगला की प्रणालिका में जिन सन्तों की नामावली दी गयी है वे भी अपना सीधा सम्बन्ध अखाजी से नहीं जोड़ते । अखा-प्रणालिका के अन्तिम सन्त भगवानजी महाराज द्वारा सम्पादित 'सन्तों नी वाणी' में लालदास, जीतामुनि, जीवणदास और कल्याणदास आदि ज्ञानी-कवियों की हिन्दी रचनाएँ मिलती हैं ।

---

१. देखिए-'कविचरित' भाग.१-२, पृ.५६७ -श्री. के.का.शास्त्री
और
'अखो- एक अध्ययन' श्री. उमाशंकर जोशी ।

:ब: **निरांत-सम्प्रदाय :**

निरांत : सं.१८०३ – १९०८ : द्वारा संस्थापित इस सम्प्रदाय के अन्तर्गत बापू साहब गायकवाड़, अर्जुन भगत तथा गणपतराम आदि शिष्यों के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। निरांत भगत ने अपने नाम का सम्प्रदाय चलाने के लिए शिष्यों के सोलह घरों में चरण-पादुकाएँ अर्पित कर गद्दियाँ प्रस्थापित कीं। बड़ौदा का निरांत मन्दिर सबसे बड़ा माना जाता है। निरांत के शिष्यों की परम्परा इस प्रकार है[१] :—

`निरांत-शिष्य परम्परा`

निरांत —
= नरेरदास
= दयालदास
= गोविन्दराम
= मंछाराम
= शामदास
= मायबाजी
= रणुभानजी
= माधवराम
= खुशालदास
= बावाभाई
= बापू साहब
= भीखाभाई
= रामदास
= वणारशीमा
= मंछाराम
= केशवदास

: इनके पश्चात् इनकी कोई गद्दी प्रस्थापित नहीं हुई ।:

१. निरांत-काव्य पृ.२१ – ३२ के आधार पर ।

निरांत के जिन शिष्यों की परम्परा आगे चली, वह इस प्रकार है :-

:अ: दयालदास : गद्दी-बड़ौदा-वाड़ी में :

- गवरीशंकर : शिनोर :
  - बहेचरराम : वांतरसा आमोद :
    - देवशंकर
      - मणिबा
      - गोपालराम

:ब: गोविन्दराम : गद्दी-सूरत में :

- रामदास
  - मगनदास
    - नारणदास
- गणपतराम
- रणछोड़दास
  - अर्जुनभगत
- वासजीभाई

:स : मंछाराम : गद्दी- बेगमपुरा-सूरत :

- गिरजाबा
  - नारायणगिरि
    - नरभैराम
      - दलपतराम
- दौलतराम
  - रामबा
    - मनसुखराम
- नरोतमदास

:द: खुमानसींग : गद्दी-बेडच में :

- जीवाबा
  - फतेहसिंह
- भगवानसींग
  - नाथूबावा
    - धरमबावा

Smt. HANSA MEHTA LIBRARY UNIVERSITY OF BARODA

:य: माधवराम : गद्दी- गेरुआ कलिया-बड़ोदा में:

- खुशालदास
- मंगलराम
  - गोपालराम

:म: खुशालदास : देथाण में गद्दी :
: निरांत पुत्र :

- झवेरभाई
- जेसंगभाई

:ल: बापाभाई : देथाण में गद्दी :
: निरांत पुत्र :

- काभईभाई
  - नाथाभाई

:क: शामदास : गद्दी- काशीपुरा में :

- सूरजराम
  - मणिराम
    - धीरजबा
    - वासजीभाई
  - धरमगीर
    - नारायणगिरि
    - दयाराम
    - उमेदगीर
    - प्रेमदास

: एक लम्बी परम्परा चलती है :

:स: कुबेर पंथ :

इसका नाम कैवलज्ञान -बड़ सम्प्रदाय अथवा कायम-पंथ भी है । इस पंथ के प्रवर्तक कुबेरदास : सं.१८२६ : थे, जिन्होंने अपनी मुख्य गद्दी, आनंद के पास अवस्थित सारसा में प्रस्थापित की । इस सम्प्रदाय के कुल मिलाकर ५२ मन्दिर हैं । 'ॐ. आद्य सकृत स्वराज करुणेश कैवल ननामी' इस पंथ का मूल मन्त्र है । संक्षेप में कुबेर-पंथ की निम्न लिखित मान्यताएँ हैं :—

:१: इनका कैवल पद सगुण पद और निर्गुण बेहद के कीचड़ से परे अनहद पद का है ।

:२: विश्व का आदि सर्जनहार एक कैवल-कर्ता है । इस कैवल-पिता ने अपने शुद्ध संकल्प से सृष्टि के प्रारम्भ काल में दो अंश सर्जित किये ।:१: निरंजन । :२: परम गुरु । निरंजन अंश को उन्होंने सृष्टि के कार्य क्रम में लगाया और परम गुरु को भटकते जीवों को कैवल स्वरूप का बोध कराने में प्रवृत्त किया ।

डॉ. क.मा. मुंशी ने कुबेर पंथ को रामानंद-सम्प्रदाय की एक शाखा ही माना है ।[१] बहुत संभव है कि कुबेरदास के गुरु श्रीकृष्ण स्वामी महाराज रामानंद सम्प्रदाय के रहे हों । कुबेर-पंथ की प्रणालिका इस प्रकार है :

श्रीकृष्ण स्वामी
|
कुबेरदास
|
नारणदास
|
बलदेवदास
|
भगवानदास
|

१. देखिए— मध्यकालीन साहित्य प्रवाह

।
प्रागदास
।
शितलदास

:द: <u>ब्रह्मचारी आश्रम :</u>

यह कबीर-पंथ की ही कोई प्रशाखा प्रतीत होती है । इसके संस्थापक संत महात्यमराम : सं.१८८२-सं.१९४५ : जी थे, जिनकी वाणी में उक्त-सम्प्रदाय की निम्न-लिखित विशिष्टताएँ मिलती हैं :

:१: गुरु वत् पूजन ।
:२: कबीरजी का अनेकश: उल्लेख ।
:३: 'साहेब' शब्द का बाहुल्य ।
:४: 'सत् रमेति राम' इनका मूल मन्त्र है ।
:५: इनकी वाणी में अखा के बहुप्रयुक्त शब्दों का बार-बार प्रयोग मिलता है, इससे प्रतीत होता है कि इनपर अखा-प्रणालिका का परोक्ष प्रभाव भी अवश्य पड़ा था ।

संक्षेप में इसका सम्बन्ध कबीर-पंथ, विशेषत: 'राम कबीरिया' के साथ जोड़ना अधिक संगत प्रतीत होता है । ब्रह्मचारी आश्रम की मुख्य गद्दी सीमरडा : जि.खेड़ा : में है तथा इसकी प्रणालिका निम्न लिखित है :

महात्मा देवराम
।
महात्यमराम
।
नरमेराम
।
निरमलराम
।
शालगराम
।

।
परागराम
।
लायकराम
।
नौकाराम

संतमहात्यमराम के प्रमुख शिष्यों में संत हरिराम : मृत्यु सं.१९५६ : भी थे, जो पहुँचे हुए संत थे और जिन्होंने पादरा में मन्दिर की स्थापना कर अपने गुरु का उपदेश और स्वानुभूतियों का बोध जनजीवन को कराया । इनकी शिष्य-परम्परा इस प्रकार मिलती है :-

हरिराम
।
दयाराम
।
गंगाराम
।
लालराम
।
आत्माराम : जीवित :

:घ: <u>श्रेय साधक अधिकारी वर्ग :</u>

संवत् १९३६ के आसपास जबकि बम्बई और अहमदाबाद में प्रार्थना-समाज, आर्य समाज और थियोसोफिकल प्रभृति संस्थाएँ अपने-अपने ढंग पर हिन्दू-धर्म के शोधन में प्रवृत्त थीं, उसी समय :सं.१९३८ : बड़ौदा में 'महाकाल' नामक मासिक पत्रिका द्वारा हिन्दू-तत्त्वज्ञान को जगत् प्रसिद्ध करने का श्रेय प्राप्त करने वाली तथा योग के अनेकानेक चमत्कारपूर्ण प्रयोगों द्वारा अपना प्रभाव फैलाने वाली एक संस्था इस नाम से चल रही थी जिसके संस्थापक थे श्री. नृसिंहाचार्य । ये अपने समय के श्रेष्ठ मौलिक विचारक थे, जिनके सम्बन्ध में कर्नल आल्कोट ने एक बार कहा था -

'I have come across many saints but have never seen such spritual halo on any other face.'

इन्होंने पारिवारिक जीवन की शुद्धता एवं उच्चतर भूमिका पर योग की परिभाषा की । इस वर्ग में समाज एवं संसार सेवा की अपेक्षा कुटुम्ब सेवा पर अधिक बल दिया गया और उसीको योग का प्रथम सोपान भी कहा । परिणित जीवन को इन्होंने उत्कृष्ट जीवन बताया । इस वर्ग ने अपनी रचनाओं द्वारा हिन्दी तथा गुजराती साहित्य को समृद्ध किया है । उपेन्द्राचार्य तथा छोटालाल मास्तर आदि श्रेय साधकों द्वारा इसकी अभिवृद्धि हुई । शिक्षित वर्ग इस पंथ का विशेष अनुगामी है । स्वामीनारायण सम्प्रदाय का प्रभाव जिस प्रकार गुजरात के निम्न स्तरीय लोगों पर अत्यधिक पड़ा, मध्यम वर्ग के बुद्धिजीवी एवं संस्कार जन्य समाज पर उसी प्रकार श्रेय साधक वर्ग का प्रभाव भी ऐतिहासिक है ।

प्रस्तुत परिच्छेद के अन्तर्गत केवल उन्हीं प्रमुख सम्प्रदायों, पंथों और प्रणालिकाओं का परिचय दिया गया है जिन्होंने गुजरात के जनजीवन को विशेष रूप से प्रभावित किया है तथा जिनसे प्रेरित होकर गुजरात के सन्तों ने हिन्दी में काव्य रचना की है ।

00 00 00